अध्याय 16

पर्यावरण के मुद्दे

16.1 वायु प्रदूषण एवं इसका नियंत्रण

16.2 जल प्रदूषण एवं उसका नियंत्रण

16.3 ठोस अपशिष्ट

16.4 कृषि-रसायन एवं उनके प्रभाव

16.5 रेडियो सक्रिय अपशिष्ट

16.6 ग्रीनहाउस प्रभाव एवं विश्वव्यापी उष्णता

16.7 समतापमंडल में ओजोन अवक्षय

16.8 संसाधन के अनुचित उपयोग एवं अनुचित अनुरक्षण द्वारा निम्नीकरण

16.9 वनोन्मूलन

गत सौ वर्ष में मनुष्य की जनसंख्या में भारी बढ़ोतरी हुई है। इसके कारण अंन, जल, घर, बिजली, सड़क, वाहन और अन्य वस्तुओं की माँग में भी वृद्धि हुई है। परिणामस्वरूप हमारे प्राकृतिक संसाधनों पर काफी दबाव पड़ रहा है और वायु, जल तथा भूमि प्रदूषण बढ़ता जा रहा है। हमारी आज भी आवश्यकता है कि विकास की प्रक्रिया को बिना रोके अपने महत्त्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों को खराब होने (निम्नीकरण) और इनको अवक्षय को रोकें और इसे प्रदूषित होने से बचाएँ।

प्रदूषण (पॅलूशन) — प्रदूषण वायु, भूमि, जल या मृदा के भौतिक, रासायनिक या जैवीय अभिलक्षणों का एक अवांछनीय परिवर्तन है। अवांछनीय परिवर्तन उत्पन्न करने वाले कारकों को प्रदूषक (पॅलूटैंट) कहते हैं। पर्यावरण के प्रदूषण को नियंत्रित तथा इसकी संरक्षा करने एवं हमारे पर्यावरण की गुणवत्ता सुधारने के लिए भारत सरकार द्वारा **पर्यावरण (संरक्षा) अधिनियम, 1986** पारित किया गया है।

16.1 वायु प्रदूषण और इसका नियंत्रण

हम श्वसन संबंधी आवश्यकताओं के लिए वायु पर निर्भर करते हैं। वायु प्रदूषक सभी जीवों को क्षति पहुँचाते हैं। वे फसल की वृद्धि एवं उत्पाद कम करते हैं और इनके कारण पौधे अपरिपक्व अवस्था में मर जाते हैं। वायु प्रदूषक मनुष्य और पशुओं के श्वसन तंत्र पर काफी हानिकारक प्रभाव डालते हैं। ये हानिकारक प्रभाव प्रदूषकों की सांद्रता उद्भासन-काल और जीव पर निर्भर करते हैं।

ताप विद्युत सन्यंत्रों के धूम्र स्तंभ (स्मोकस्टैकस), कणिकीय धूम्र और अन्य उद्योगों से हानिकर गैसें जब नाइट्रोजन, ऑक्सीजन आदि के साथ (पारटिकुलेट) और गैसीय वायु प्रदूषक भी निकलते हैं। वायुमंडल में इन अहानिकारक गैसों को छोड़ने से पहले इन प्रदूषकों को पृथक करके या निस्यांदित (फिल्टर्ड) कर बाहर निकाल देना चाहिए।

कणिकीय पदार्थो को निकलने के कई तरीके हैं; सबसे अधिक व्यापक रूप से जो तरीका अपनाया जाता है वह है (चित्र 16.1) स्थिर **वैद्युत अवक्षेपित्र** (इलैक्ट्रोस्टैटिक प्रेसिपेटेटर) है, जो ताप विद्युत सन्यंत्र के निर्वात्तक (इगजॉस्ट) में मौजूद 99 प्रतिशत

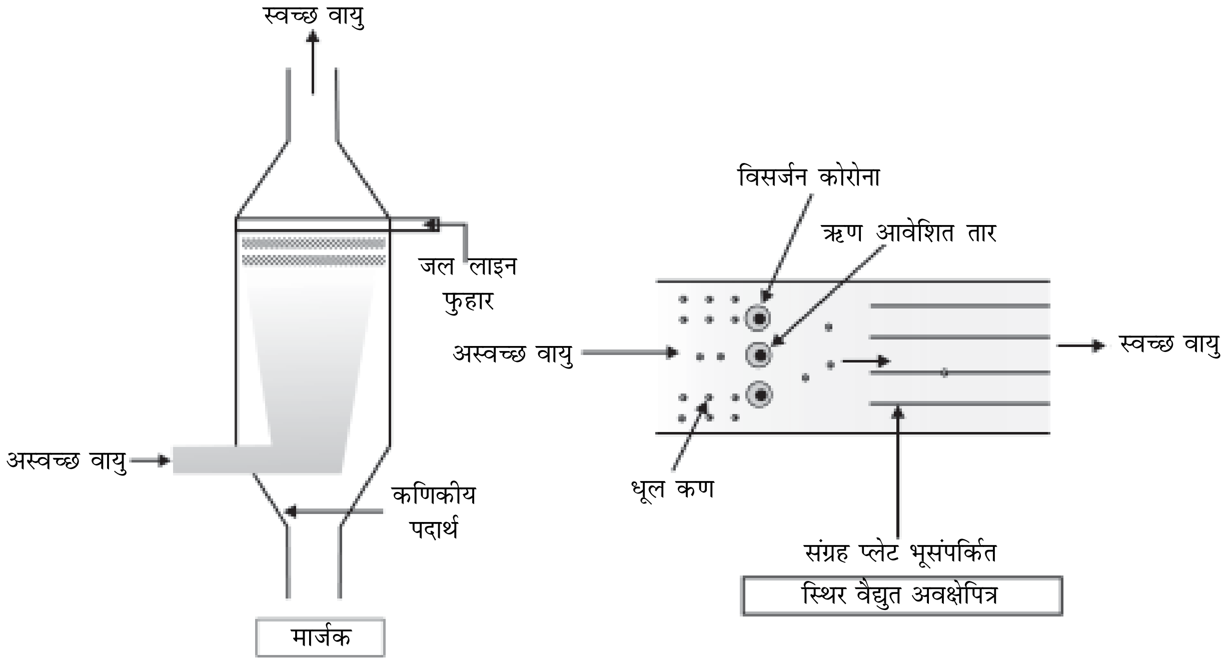

चित्र 16.1 स्थिर वैद्युत अवक्षेपित्र

कणिकीय पदार्थो को हटा देता है। इसमें एक इलैक्ट्रोड तार होता है जिससे होकर हजारों वोल्ट गुजरता है जो कोरोना उत्पन्न करता है और इससे इलैक्ट्रॉन निकलते हैं। ये इलैक्ट्रॉन धूल के कणों से सट जाते हैं और इन्हें ऋण आवेश (नेगेटिव चार्ज) प्रदान करते हैं। संचायक पट्टिकाएँ नीचे की ओर आ जाती हैं और आवेशित धूल कणों को आकर्षित करती हैं। पट्टिकाओं के बीच वायु वेग (वेलॉसिटि) काफी कम होना चाहिए जिससे कि धूल नीचे गिर जाए। मार्जक (स्क्रबर) नामक संरचना (चित्र 16.1) सल्फर डाइऑक्साइड जैसी गैसों को हटा सकती है। मार्जक में यह निर्वात जल या चूने की फुहार से होकर गुजरता है। हाल ही हमने कणिकीय पदार्थ, जो बहुत ही छोटे होते हैं और अवक्षेपित्र द्वारा हटाए नहीं जा सकते, के खतरों को अनुभव किया है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सी पी सी बी) के अनुसार 2.5 माइक्रोमीटर या कम व्यास के आकार (पी एम 2.5) के कणिकीय पदार्थ मानव स्वास्थ्य के लिए सबसे अधिक नुकसानदेह हैं। सांस अंदर लेते

समय ये सूक्ष्म कणिकीय पदार्थ फेफड़ों के भीतर चले जाते हैं और इनसे जैसे श्वसन संलक्षण उत्तेजना, शोथ और फेफड़ों की क्षति तथा अकाल मृत्यु हो सकती है।

खासकर महानगरों में स्वचालित वाहन वायुमंडल प्रदूषण के प्रमुख कारण हैं। जैसे-जैसे सड़कों पर वाहनों की संख्या बढ़ती है यह समस्या अन्य शहरों में भी पहुँच रही है। स्वचालित वाहनों का रखरखाव उचित होना चाहिए। उनमें सीसा रहित पेट्रोल या डीजल का प्रयोग होने से उत्सर्जित प्रदूषकों की मात्रा कम हो सकती है। उत्प्रेरक परिवर्तक (कैटालिटिक कनवर्टर) में कीमती धातु, प्लैटिनम-पैलेडियम और रोडियम लगे होते हैं जो उत्प्रेरक (कैटेलिस्ट) का कार्य करते हैं। ये परिवर्तक स्वचालित वाहनों में लगे होते हैं जो विषैले गैसों के उत्सर्जन को कम करते हैं। जैसे ही निर्वात उत्प्रेरक परिवर्तक से होकर गुजरता है अदग्ध हाइड्रोकार्बनडाईऑक्साइड और जल में बदल जाता है और कार्बन मोनोऑक्साइड तथा नाइट्रिक ऑक्साइड क्रमशः कार्बन डाइऑक्साइड और नाइट्रोजन गैस में परिवर्तित हो जाता है। उत्प्रेरक परिवर्तक युक्त मोटर वाहनों में सीसा रहित (अनलेडेड) पेट्रोल का उपयोग करना चाहिए; क्योंकि सीसा युक्त पेट्रोल उत्प्रेरक को अक्रिय करता है।

16.1.1 वाहन वायु प्रदूषण का नियंत्रण — दिल्ली में किया गया एक अध्ययन

वाहनों की संख्या काफी अधिक होने के कारण दिल्ली में वायु प्रदूषण का स्तर देश में सबसे अधिक है। यहाँ पर वाहनों की संख्या गुजरात और पश्चिम बंगाल में कुल मिलाकर जितने वाहन हैं या उससे अधिक है। सन् 1990 के एक आँकड़ो के अनुसार दिल्ली का स्थान विश्व के 41 सर्वाधिक प्रदूषित नगरों में चौथा है। दिल्ली में वायु प्रदूषण का मामला इतना खतरनाक हो गया कि भारत के सर्वोच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका (पी आई एल) दायर की गई। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इसकी कड़ी निंदा की गई और न्यायालय ने भारत सरकार से एक निश्चित अवधि में उचित उपाय करने का आदेश दिया साथ ही, यह भी आदेश दिया कि सभी सरकारी वाहनों यानी बसों में डीजल के स्थान पर **संपीडित प्राकृतिक गैस (सीएनजी)** का प्रयोग किया जाए। वर्ष 2002 के अंत तक दिल्ली की सभी बसों को सीएनजी में परिवर्तित कर दिया गया। आप पूछ सकते हैं। कि सीएनजी डीजल से बेहतर क्यों है। इसका उत्तर है कि वाहन में सीएनजी सबसे अच्छी तरह जलता (burn) है और बहुत ही कम मात्रा में जलने से बच जाता है जबकि डीजल या पेट्रोल के मामले में ऐसा नहीं है। इसके अलावा यह पेट्रोल या डीजल से सस्ता है। चोर इसकी चोरी नहीं कर सकता और पेट्रोल तथा डीजल की तरह इसे अपमिश्रित नहीं किया जा सकता। सीएनजी में परिवर्तित करने में मुख्य समस्या इसे वितरण स्थल/पंप तक ले जाने के लिए पाइप लाइन बिछाने की कठिनाई को लेकर और इसकी अबाधित सप्लाई करने की है। साथ ही साथ दिल्ली में वाहन प्रदूषण को कम करने के जो अन्य उपाय किए गए हैं वे ये हैं पुरानी गाड़ियों को धीरे-धीरे हटा देना, सीसा रहित पेट्रोल और डीजल का प्रयोग, कम गंधक (सल्फर) युक्त पेट्रोल और डीजल का प्रयोग, वाहनों में उत्प्रेरक परिवर्तकों का प्रयोग, वाहनों के लिए कठोर प्रदूषण स्तर लागू करना आदि।

भारत सरकार ने एक नयी वाहन ईंधन नीति के तहत यहाँ के शहरों में वाहन प्रदूषण को कम करने के लिए मार्गदर्शी सिद्धांत निर्धारित किया है। ईंधन के लिए अधिक कठोर

मानक बनाए गए हैं ताकि पेट्रोल और डीजल ईंधनों में धीरे-धीरे गंधक और एरोमेटिक की मात्रा कम की जाए। उदाहरण के लिए, यूरो II मानक के अनुसार डीजल और पेट्रोल में गंधक भी नियंत्रित कर क्रमश: 305 और 150 पार्ट्स प्रति मिलियन (पी पी एम) करना चाहिए। संबंधित ईंधन में एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन 42 प्रतिशत पर सीमित करना चाहिए। मार्गदर्शी के अनुसार पेट्रोल और डीजल में गंधक को कम कर 50 पी पी एम पर लाकर लक्ष्य को 35 प्रतिशत के स्तर पर लाना चाहिए। ईंधन के अनुरूप वाहन के इंजनों में भी सुधार करना पड़ेगा। भारत स्टेज II, जो यूरो-II मानक के तुल्य है, और जो अभी दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, चेन्नई, बंगलोर, हैदराबाद, अहमदाबाद, पुणे, सूरत, कानपुर और आगरा में लागू है। वह 1 अप्रैल 2005 से पूरे देश में सभी स्वचालित वाहनों में लागू किया जाना चाहिए। 1 अप्रैल 2005 से ऊपर वर्णित सभी ग्यारहों शहरों में सभी स्वचालित वाहनों और ईंधन, पेट्रोल और डीजल के लिए उत्सर्जन मानक यूरो-III होना चाहिए था और 1 अप्रैल 2010 के लिए यह यूरो-IV निर्धारित किया गया है। देश के अन्य सभी भागों में 2010 तक यूरो-III मानक लागू करने का लक्ष्य रखा गया है।

दिल्ली में किए गए इस प्रयासों को धन्यवाद, जिसके कारण यहाँ की वायु की गुणवत्ता में काफी सुधार हुआ। एक आँकलन के अनुसार सन 1997-2005 तक दिल्ली में Co और So_2 के स्तर में काफी गिरावट आई है।

भारत में **वायु प्रदूषण निरोध एवं नियंत्रण अधिनियम** 1981 में लागू हुआ, लेकिन इसमें 1987 में संशोधन कर शोर को वायु प्रदूषण के रूप में सम्मिलित किया गया। **शोर** (नॉइज) एक अवांछित उच्च स्तर ध्वनि है। हम आनंद और मनोरंजन के लिए तेज ध्वनि के आदी हो गए हैं, लेकिन यह नहीं सोचते कि इसके कारण मानव में मनोवैज्ञानिक और कार्यकीय या शरीर क्रियात्मक विकार (डिसऑर्डर) पैदा होते हैं। जितना बड़ा शहर उतना ही बड़ा उत्सव और उतना ही अधिक शोर! किसी जेट वायुयान या रॉकेट के उड़ान के समय उत्पन्न अति उच्च ध्वनि स्तर 150 डेसिबल या इससे अधिक स्तर की ध्वनि को थोड़े ही समय तक सुनने से कर्ण-पटह (इअर ड्रम) क्षतिग्रस्त हो सकता है। इस प्रकार व्यक्ति की सुनने की क्षमता सदा के लिए नष्ट हो सकती है। शहरों की अपेक्षाकृत निम्न ध्वनि स्तर के दीर्घकालिक उद्भासन के कारण भी हमारी सुनने की क्षमता स्थायी रूप से क्षतिग्रस्त हो सकती है। शोर के कारण अनिद्रा, हृद-स्पंद (हर्ट बीटिंग) का बढ़ जाना, श्वसन के तरीके में परिवर्तन आदि से मनुष्य पीड़ित हो सकता है, जिसके कारण वह काफी तनाव की स्थिति में रहता है।

यह जानते हुए कि शोर प्रदूषण के कई खतरनाक प्रभाव होते हैं, क्या आप अपने आस पास के अनावश्यक ध्वनि प्रदूषण के स्रोत का पता लगा सकते हैं, जिसे किसी को आर्थिक हानि पहुँचाए बिना तत्काल कम किया जा सकता है? हमारे उद्योगों में ध्वनि-अवशोषक पदार्थ का प्रयोग कर या ध्वनि ढककर इसे कम किया जा सकता है। अस्पताल और स्कूल के आस पास हॉर्न-मुक्त जोन का सीमांकन, पटाखे और लाउडस्पीकर के लिए अनुमेय ध्वनि-स्तर, लाउडस्पीकर के लिए समय-सीमा तय करके, ताकि उसके बाद इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता है, आदि के बारे में कठोर कानून बनाकर और उसे लागू कर ध्वनि प्रदूषण से अपनी रक्षा कर सकते हैं।

16.2 जल प्रदूषण एवं इसका नियंत्रण

संपूर्ण विश्व में मनुष्य जलाशयों में सभी प्रकार के अपशिष्ट का निपटान कर इसका दुरुपयोग कर रहा है। हम यह मान लेते हैं कि जल सब कुछ बहाकर ले जाएगा। ऐसा करते समय हम यह नहीं सोचते कि जलाशय हमारे साथ-साथ अन्य सभी जीवों के लिए जीवन का आधार है। *क्या आप बता सकते हैं कि हम नदियों और नालों में क्या-क्या बहा देते हैं?* विश्व के अनेक भागों में तालाब, झील, सरिता (या धारा) नदी, ज्वारनदमुख (ऐस्चुएरी) और महासागर के जल प्रदूषित हो रहे हैं। जलाशयों की स्वच्छता को कायम रखने के महत्त्व को समझते हुए भारत सरकार ने **1974 में जल प्रदूषण निरोध एवं नियंत्रण अधिनियम** पारित किया है ताकि हमारे जल संसाधनों को प्रदूषित होने से बचाया जा सके।

16.2.1 घरेलू वाहित मल और औद्योगिक बहि:स्राव

नगरों और शहरों में जब हम अपने घरों में जल का काम करते हैं तो सभी चीजों को नालियों में बहा देते हैं। क्या आपको कभी आश्चर्य हुआ है कि हमारे घरों से निकलने वाला वाहित मल कहाँ जाता है? क्या समीपस्थ नदी में ले जाकर डालने या इसमें मिलने से पूर्व वाहित मल का उपचार किया जाता है? केवल 0.1 प्रतिशत अपद्रव्यों (इम्प्यूरीटीज) के कारण ही घरेलू वाहित मल मानव के उपयोग के लायक नहीं रहता है। (चित्र 16.2) आप वाहित मल उपचार-सन्यत्र के बारे में अध्याय 10 में पढ़ चुके हैं। ठोस पदार्थों को निकालना अपेक्षाकृत आसान है लेकिन विलीन लवण, जैसे नाइट्राइट, फॉस्फेट और अन्य पोषकों तथा विषैले धातु आयनों और कार्बनिक यौगिक को निकालना कठिन है। घरेलू मल में मुख्य रूप से जैव निम्नीकरणीय कार्बनिक पदार्थ होते हैं जिनका अपघटन (डिकम्पोजिशन) आसानी से होता है। हम अभारी हैं जीवाणु (बैक्टीरिया) और अन्य सूक्ष्म जीवों के जो इन जैव पदार्थों का उपयोग कार्यद्रव (सब्सट्रेट) के रूप में भी करके अपनी संख्या में वृद्धि कर सकते हैं और इस प्रकार ये वाहित मल के कुछ अवयवों का उपयोग करते हैं। वाहितमल जल जीव रासायनिक ऑक्सीजन आवश्यकता (**बायोकेमिकल ऑक्सीजन डिमांड/बी ओ डी**) माप कर जैव पदार्थ की मात्रा का आकलन किया जा सकता है। *क्या आप बता सकते हैं कि यह किस प्रकार किया जाता है?* सूक्ष्मजीव से संबंधित अध्याय में आप बी ओ डी, सूक्ष्मजीवों और जैव निम्नीकरणीय पदार्थ के परस्पर संबंध के बारे में पढ़ चुके हैं।

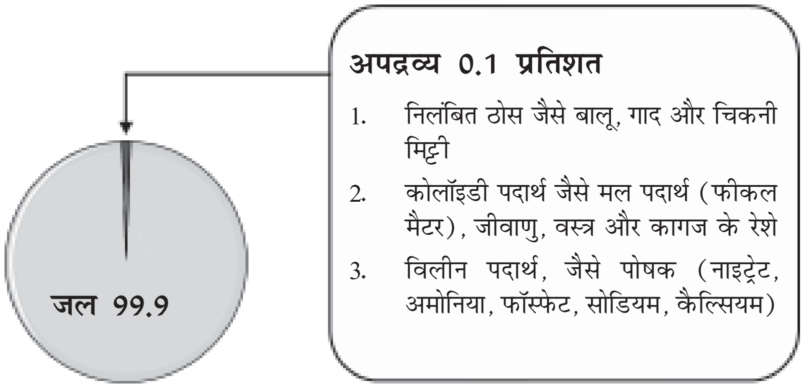

चित्र 16.2 अपशिष्ट जल संघटन

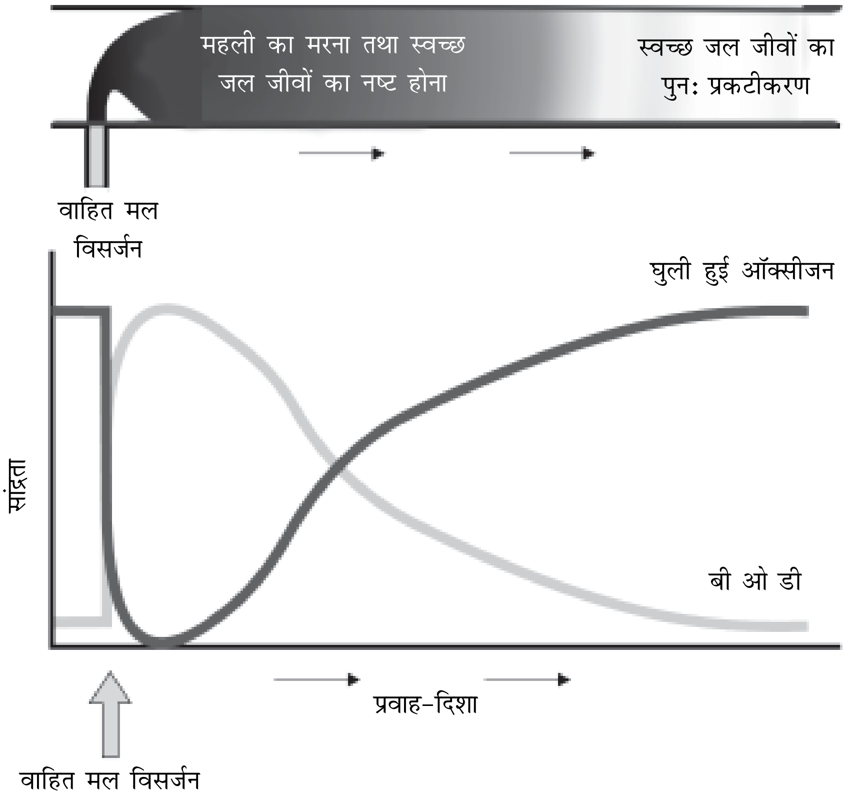

चित्र 16.3 नदी के कुछ महत्त्वपूर्ण लक्षणों पर वाहित मल विसर्जन का प्रभाव

चित्र 16.3 में कुछ परिवर्तन दर्शाए गए हैं जिन्हें नदी में वाहित मल के विसर्जन के पश्चात् देख जा सकता है। अभिवाही जलाशय में जैव पदार्थों के जैव निम्नीकरण (बायोडिग्रेडेशन) से जुड़े सूक्ष्मजीव ऑक्सीजन की काफी मात्रा का उपभोग करते हैं। इसके स्वरूप वाहितमल विसर्जन स्थल पर भी अनुप्रवाह (डाउनस्ट्रीम) जल में घुली ऑक्सीजन की मात्रा में तेजी से गिरावट आती है और इसके कारण मछलियों तथा अन्य जलीय जीवों की मृत्युदर में वृद्धि हो जाती है।

जलाशयों में काफी मात्रा में पोषकों की उपस्थिति के कारण **प्लवकीय** (मुक्त-प्लावी) शैवाल की अतिशय वृद्धि होती है इसे **शैवाल प्रस्फुटन** (अल्गल ब्लूम) कहा जाता है (चित्र 16.4)। इसके कारण जलाशयों का रंग विशेष प्रकार का हो जाता है। शैवाल प्रस्फुटन के कारण जल की गुणवत्ता घट जाती है और मछलियाँ मर जाती हैं। कुछ प्रस्फुटनकारी शैवाल मनुष्य और जानवरों के लिए अतिशय विषैले होते हैं।

आपने नीलाशोण (मोव) रंग के सुंदर फूलों को देखा होगा जो जलाशयों में काफी चित्ताकर्षक आकार के प्लावी पौधों पर होते हैं। ये पौधे अपने सुंदर फूलों के कारण भारत में उगाए गए थे, लेकिन अपनी अतिशय वृद्धि के कारण तबाही मचा रहे हैं। ये पौधे हमारी हटाने की क्षमता से कहीं अधिक तेजी से वृद्धि कर, हमारे जलमार्गों (वाटर वे) को

चित्र 16.4 शैवाल प्रस्फुटन का चित्रमय दृश्य

अवरुद्ध कर। ये जल हायसिंथ (*आइकोर्निया केसिपीज*) पादप हैं जो विश्व के सबसे अधिक समस्या उत्पन्न करने वाले जलीय खरपतवार (वीड) हैं और जिन्हें बंगाल का आतंक भी कहा जाता है। ये पादप सुपोषी जलाशयों में काफी वृद्धि करते हैं और इसके पारितंत्र गति को असंतुलित कर देते हैं।

हमारे घरों के साथ-साथ अस्पतालों के वाहित मल में बहुत से अवांछित रोगजनक सूक्ष्मजीव हो सकते हैं और उचित उपचार के बिना इसको जल में विसर्जित करने से कठिन रोग- जैसे पेचिश (अतिसार), टाइफाइड, पीलिया (जांडिस), हैजा (कोलरा) आदि हो सकते हैं।

घरेलू वाहित मल की अपेक्षा उद्योगों, जैसे पेट्रोलियम, कागज उत्पादन, धातु निष्कर्षन (एक्सट्रेक्सन) एवं प्रसंस्करण (प्रोसेसिंग), रासायनिक-उत्पादन आदि के अपशिष्ट जल में प्राय: विषैले पदार्थ, खासकर भारी धातु (ऐसे तत्त्व जिनका घनत्व >5 ग्राम/सेमी^{3}, जैसे पारा, कैडमियम, ताँबा, सीसा आदि) और कई प्रकार के कार्बनिक यौगिक होते हैं।

उद्योगों के अपशिष्ट जल में प्राय: विद्यमान कुछ विषैले पदार्थों में जलीय खाद्य शृंखला **जैव आवर्धन (बायोमैग्निफिकेशन)** कर सकते हैं । जैव आवर्धन का तात्पर्य है, क्रमिक पोषण स्तर (ट्रॉफिक लेबल) पर आविषाक्त की सांद्रता में वृद्धि का होना। इसका कारण है जीव द्वारा संग्रहित आविषालु पदार्थ उपापचयित या उत्सर्जित नहीं हो सकता और इस प्रकार यह अगले उच्चतर पोषण स्तर पर पहुँच जाता है। यह परिघटन पारा एवं डीडीटी के लिए सुविदित है। चित्र 16.5 में जलीय खाद्य शृंखला में डीडीटी का जैव आवर्धन दर्शाया गया है।

इस प्रकार क्रमिक पोषण स्तरों पर डीडीटी की सांद्रता बढ़ जाती है। यदि जल में यह सांद्रता 0.003 पी पी बी (ppb=पार्टस पर बिलियन) से आरंभ होती है तो अंत में जैव आवर्धन के द्वारा मत्सयभक्षी पक्षियों में बढ़कर 25 पीपीएम हो जाती है। पक्षियों में

डीडीटी की उच्च सांद्रता कैल्सियम उपापचय को नुकसान पहुँचाती है जिसके कारण अंड-कवच (एग शेल) पतला हो जाता है और यह समय से पहले फट जाता है जिसके कारण पक्षि-समष्टि (बर्ड पोपुलेशन) यानी इनकी संख्या में कमी हो जाती है।

सुपोषण (यूट्रॉफिकेशन) झील का प्राकृतिक काल-प्रभावन (एजिंग) दर्शाता है यानी झील अधिक उम्र की हो जाती है। यह इसके जल की जैव समृद्धि के कारण होता है। तरुण (कम उम्र की) झील का जल शीतल और स्वच्छ होता है। समय के साथ-साथ, इसमें सरिता के जल के साथ पोषक तत्त्व जैसे नाइट्रोजन और फॉस्फोरस आते रहते हैं जिसके कारण जलीय जीवों में वृद्धि होती रहती है। जैसे-जैसे झील की उर्वरता बढ़ती है वैसे-वैसे पादप और प्राणि जीवन प्राणि बढ़ने लगते हैं और कार्बनिक अवशेष झील के तल में बैठने लगते हैं। सैकड़ों वर्षों में इसमें जैसे-जैसे साद (सिल्ट) और जैव मलवे (आर्गेनिक मलवा) का ढेर लगता जाता है वैसे-वैसे झील उथली और गर्म होती जाती है। झील के ठंडे पर्यावरण वाले जीव के स्थान पर उष्णजल जीव रहने लगते हैं। कच्छ पादप उथली जगह पर जड़ जमा लेते हैं और झील की मूल द्रोणी (बेसिन) को भरने लगते हैं उथले झील में अब कच्छ (marsh) पादप उग आते हैं और मूल झील बेसिन उनसे भर जाता है। कालांतर में झील काफी संख्या में प्लावी पादपों (दलदल/बॉग) से भर जाता है और अंत में यह भूमि में परिवर्तित हो जाता है। जलवायु, झील का साइज और अन्य कारकों के अनुसार झील का यह प्राकृतिक काल-प्रभावन हजारों वर्षों में होता है। फिर भी मनुष्य के क्रिया कलाप, जैसे उद्योगों और घरों के बहि:स्राव (एफ्लुअंट) काल-प्रभावन प्रक्रम में मूलत: तेजी ला सकते हैं। इस प्रक्रिया को संवर्ध (कल्चरल) या **त्वरित सुपोषण (एक्सिलरेटेंड यूट्रॉफिकेशन)** कहा जाता है। गत शताब्दी में पृथ्वी के कई भागों के झील का वाहित मल और कृषि तथा औद्योगिक अपशिष्ट के कारण तीव्र सुपोषण हुआ है। इसके मुख्य संदूषक नाइट्रेट और फॉस्फोरस हैं जो पौधों के लिए पोषक का कार्य करते हैं। इनके कारण शैवाल की वृद्धि अति उद्दीपित होती है जिसकी वजह से अरमणीक मलफेन (स्कम) बनते तथा अरुचिकर गंध निकलती हैं। ऐसा होने से जल में विलीन ऑक्सीजन जो अन्य जल-जीवों के लिए अनिवार्य (वाइटल) है, समाप्त हो जाती है। साथ ही झील में बहकर आने वाले अन्य प्रदूषक संपूर्ण मत्स्य समष्टि को विषाक्त कर सकता है। जिनके अपघटन के अवशेष से जल में विलीन ऑक्सीजन की मात्रा और कम हो जाती है। इस प्रकार झील वास्तव में घुट कर मर सकती है।

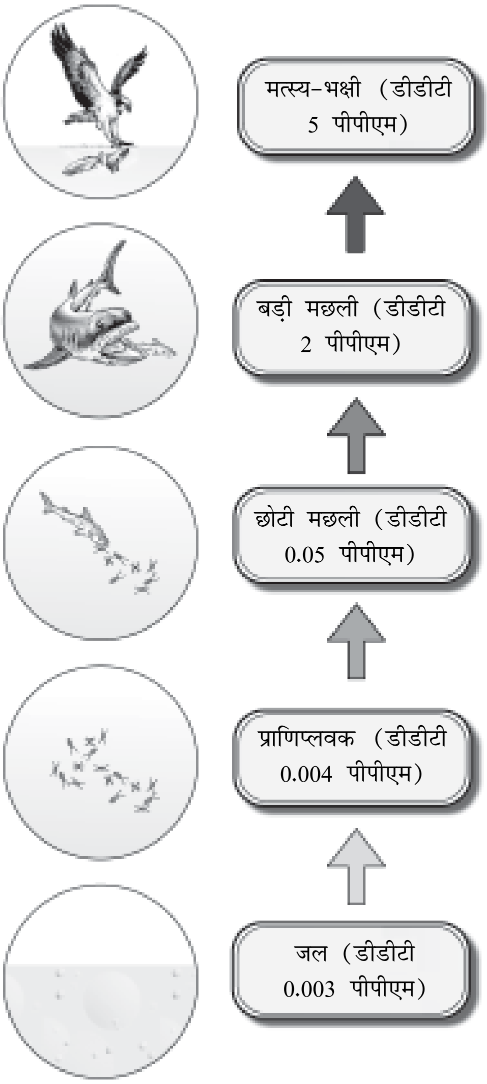

चित्र 16.5 जलीय खाद्य शृंखला में डी डी टी का जैव आवर्धन

विद्युत उत्पादी यूनिट यानी तापीय विद्युत् सन्यंत्रों से बाहर निकलने वाले तप्त (तापीय) अपशिष्ट जल दूसरे महत्त्वपूर्ण श्रेणी के प्रदूषक हैं। तापीय अपशिष्ट जल में उच्च तापमान

के प्रति संवेदनशील जीव जीवित नहीं रह पाते या इसमें उनकी संख्या कम हो जाती है लेकिन अत्यंत शीत-क्षेत्रों में इसमें पौधों तथा मछलियों की वृद्धि अधिक होती है।

16.2.2 एकीकृत अपशिष्ट जल उपचार: केस अध्ययन

वाहित मल सहित अपशिष्ट जल का उपचार एकीकृत ढंग से कृत्रिम और प्राकृतिक दोनों प्रक्रमों को मिला-जुलाकर किया जा सकता है। इस प्रक्रम का प्रयास कैलीफोर्निया के उत्तरी तट पर स्थित अर्काटा शहर में किया गया। हमबोल्ट स्टेट यूनीवर्सिटी के जीव वैज्ञानिकों के सहयोग से शहर के लोगों ने प्राकृतिक तंत्र के अंतर्गत एकीकृत जल उपचार प्रक्रम तैयार किया गया। जलोपचार का कार्य दो चरणों में किया जाता है (क) परांपरागत अवसादन, जिसमें निस्यंदन और क्लोरीन द्वारा उपचार किया जाता है। इस चरण के बाद भी खतरनाक प्रदूषक जैसे भारी धातु, काफी मात्रा में घुले रूप में रह जाते हैं। इसे दूर करने के लिए एक नवीन प्रक्रिया अपनाई गई, और (ख) जीव वैज्ञानिकों ने लगभग 60 हेक्टेयर कच्छ भूमि में आपस में जुड़े हुए छह कच्छों (मार्शेस) की एक श्रृंखला विकसित की। इस क्षेत्र में उचित पादप, शैवाल, कवक और जीवाणु छिड़के गए जो प्रदूषकों को निष्प्रभावी, अवशोषित और स्वांगीकृत (एसिमिलेट) करते हैं। इसलिए कच्छों से होकर गुजरने वाला जल प्राकृतिक रूप से शुद्ध हो जाता है।

कच्छ एक अभयारण्य की तरह कार्य करता है यहाँ उच्च स्तरीय जैव विविधता, और मछलियाँ, जानवर और पक्षी वास करते हैं। इस आश्चर्यजनक परियोजना की देखभाल तथा सुरक्षा नागरिकों के एक समूह, फ्रेंड्स ऑफ आर्कटा मार्श (एफ ओ ए एम) द्वारा की जाती है।

अब तक हमारी यह धारणा रही है कि अपशिष्ट को दूर करने के लिए जल यानी वाहित मल के निर्माण की जरूरत होती है। लेकिन मानव अपशिष्ट, उत्सर्ग (एक्सक्रीटा) यानी मल-मूत्र के निपटान के लिए यदि जल जरूरी न हो तो क्या होगा? क्या आप अनुमान लगा सकते हैं कि यदि टॉयलेट को फ्लश न करना पड़े तो जल की कितनी बचत होगी? वास्तव में यह एक वास्तविकता है।

मानव उत्सर्ग (मलमूत्र) के हैंडलिंग (निपटान) के लिए पारिस्थितिक स्वच्छता एक निर्वहनीय तंत्र है जिसमें शुष्क टॉयलेट कंपोस्टिंग का प्रयोग किया जाता है। मानव अपशिष्ट निपटान के लिए यह व्यावहारिक, स्वास्थ्यकर और कम लागत का तरीका है। यहाँ ध्यान देने योग्य मुख्य बात यह है कि कंपोस्ट की इस विधि से मानव मलमूत्र (उत्सर्ग) का पुनश्चक्रण कर एक संसाधन (प्राकृतिक उर्वरक) के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। इससे रासायनिक खाद की आवश्यकता कम हो जाती है। केरल के कई भागों और श्रीलंका में 'इकोसैन' शौचालयों (टायलेट) का प्रयोग किया जा रहा है।

16.3 ठोस अपशिष्ट

ठोस अपशिष्ट में वे सभी चीज़ें सम्मिलित हैं जो कूड़ा-कचरा में फेंक दी जाती हैं। **नगरपालिका के ठोस-अपशिष्ट** में घरों, कार्यालयों, भंडारों, विद्यालयों आदि से रद्दी में

फेंकी गई सभी चीज़ें आती हैं जो नगरपालिका द्वारा इकट्ठा की जाती हैं और उनका निपटान किया जाता है। नगरपालिका के ठोस अपशिष्ट में आमतौर पर कागज, खाद्य अपशिष्ट, काँच, धातु, रबड़, चमड़ा, वस्त्र आदि होते हैं। इनको जलाने से अपशिष्ट के आयतन में कमी आ जाती है। लेकिन यह सामान्यत: पूरी तरह जलता नहीं है और खुले में इसे फेंकने से यह चूहों और मक्खियों के लिए प्रजनन स्थल का कार्य करता है। **सैनिटरी लैंडफिल्स** खुले स्थान में जलाकर ढेर लगाने के बदले अपनाया गया था। सैनिटरी लैंडफिल में अपशिष्ट को संहनन (कॉम्पैक्शन) के बाद गड्ढा या खाई में डाला जाता है और प्रतिदिन धूल-मिट्टी (डर्ट) से ढँक दिया जाता है। यदि आप किसी शहर या नगर में रहते हैं तो क्या आपको मालूम है कि सबसे नजदीकी लैंडफिल स्थल कहाँ है? वास्तव में लैंडफिल्स भी कोई अच्छा हल नहीं है क्योंकि खासकर महानगरों में कचरा (गार्बेज) इतना अधिक होने लगा है कि ये स्थल भी भर जाते हैं। इन लैंडफिल्स से रासायनों के भी रिसाव का खतरा है जिससे कि भौम जल संसाधन प्रदूषित हो जाते हैं।

इन सब का एक मात्र हल है कि पर्यावरणीय मुद्दों के प्रति हम सभी को अधिक संवेदनशील होना चाहिए। हमारे द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है — (क) जैव निम्नीकरण योग्य (बायोडिग्रेडेबल) (ख) पुनश्चक्रण योग्य और (ग) जैव निम्नीकरण अयोग्य। यह महत्त्वपूर्ण है कि उत्पन्न सभी कचरे की छंटाई की जाए। जिस कचरे का प्रयोग या पुनश्चक्रण किया जा सकता है उसे अलग किया जाए। कचराबीन या गुदड़िया (रैग पिकर) पुनश्चक्रण किए जाने वाले पदार्थों को अलग कर एक बड़ा काम करता है। जैव निम्नीकरणीय पदार्थों को जमीन में गहरे गड्ढे में रखा जा सकता है और प्राकृतिक रूप में अपघटन के लिए छोड़ दिया जाता है। इसके पश्चात् केवल अजैव निम्नीकरणीय निपटान के लिए बच जाता है। हमारा मुख्य लक्ष्य होना चाहिए कि कचरा कम उत्पन्न हो लेकिन इसके स्थान पर हम लोग अजैवनिम्नीकरणीय उत्पादों का प्रयोग अधिक करते जा रहे हैं। किसी अच्छी गुणवत्ता की खाद्य सामग्री का तैयार (ready-made) पैकेट, जैसे बिस्कुट का पैकेट उठाकर उसकी पैकिंग को देखें और क्या आप पैकिंग के कई रक्षात्मक तहों को देखते हैं? उनमें से एक तह प्लास्टिक की होती है। हम अपनी दैनिक प्रयोग में आने वाली चीजों, जैसे दूध और जल को भी पॉलीबैग में पैक करने लगे हैं। शहरों में फल और सब्जियाँ भी सुंदर पॉलीस्टेरीन और प्लास्टिक पैक में कर दी जा सकती हैं। हमें इनकी काफी कीमत चुकानी पड़ती है और हम करते क्या हैं? पर्यावरण को काफी प्रदूषित करने में योगदान दे रहे हैं। पूरे देश में राज्य सरकारें प्रयास कर रही हैं कि प्लास्टिक का प्रयोग कम हो और इनके बदले पारि-हितैषी या मैत्री पैकिंग का प्रयोग हो। हम जब सामान खरीदने जाएँ तो कपड़े का थैला या अन्य प्राकृतिक रेशे के बने कैरी-बैग लेकर जाएँ और पॉलिथीन के बने थैले को लेने से मना करें।

16.3.1 प्लास्टिक अपशिष्ट के उपचार संबंधी अध्ययन

बंगलौर में प्लास्टिक की बोरी के उत्पादनकर्ता, 57 वर्षीय अहमद खान ने प्लास्टिक अपशिष्ट की सतत् बढ़ती हुई समस्या का एक आदर्श हल ढूँढ लिया है। वह पिछले 20 वर्षों से प्लास्टिक की बोरियाँ बना रहा है। लगभग 8 वर्ष पहले उसने महसूस किया कि

प्लास्टिक अपशिष्ट एक वास्तविक समस्या है। उसकी कंपनी ने पुनश्चक्रित परिवर्तित प्लास्टिक का पॉलिब्लेंड नामक एक महीन पाउडर तैयार किया।

इस मिश्रण को बिटुमेन के साथ मिश्रित किया गया जिसका प्रयोग सड़क बनाने में किया जाता है। अहमद खान ने आर.वी. इंजीनियरिंग कॉलेज और बंगलौर सिटी कार्पोरेशन के सहयोग से बिटुमेन और पॉलिब्लेंड के सम्मिश्रण (ब्लैंड) का प्रयोग सड़क बनाते समय किया तो पाया कि बिटुमेन का जल विकर्षक-(रिपेलेंट) गुण बढ़ गया और इसके कारण सड़क की आयु तीन गुना अधिक हो गई। पॉलिब्लेंड बनाने के लिए कच्चे माल के रूप में किसी प्लास्टिक फिल्म अपशिष्ट का प्रयोग किया जाता है। प्लास्टिक अपशिष्ट के लिए कचरा-चुनने वालों को जहाँ 0.40 रुपए प्रति किलोग्राम मिलता था, अब खान से उन्हें 6 रुपए प्रति किलोग्राम मिलने लगा है।

बंगलौर में खान की तकनीक का प्रयोग कर वर्ष 2002 तक लगभग 40 किलोमीटर सड़क का निर्माण हो चुका है। वहाँ पर अब खान को पॉलिब्लेंड तैयार करने के लिए जल्द ही प्लास्टिक अपशिष्ट की कमी पड़ने लगेगी। पॉलिब्लेंड की खोज के लिए आभार मानना चाहिए कि अब हम प्लास्टिक अवशिष्ट के दमघोंटू दुष्प्रभाव से अपने को बचा सकते हैं।

अस्पताल से खतरनाक अपशिष्ट निकलते हैं जिसमें विसंक्रामक डिसिंफेक्टेंट और अन्य हानिकर रसायन तथा रोगजनक सूक्ष्म जीव भी होते हैं। इस प्रकार के अपशिष्ट की सावधानीपूर्वक उपचार और निपटान की आवश्यकता होती है। अस्पताल के अपशिष्ट के निपटान के लिए भस्मक (इंसिनेरेटर) का प्रयोग अत्यंत आवश्यक है।

ऐसे कंप्यूटर और इलेक्ट्रॉनिक सामान जो मरम्मत के लायक नहीं रह जाते हैं इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट (ई-वेस्ट्स) कहलाते हैं। ई-अपशिष्ट को लैंडफिल्स में गाड़ दिया जाता है या जलाकर भस्म कर दिया जाता है। विकसित देशों में उत्पादित ई-अपशिष्ट का आधे से अधिक भाग विकासशील देशों, खासकर चीन, भारत तथा पाकिस्तान में निर्यात किया जाता है जबकि ताँबा, लोहा, सिलिकॉन, निकल और स्वर्ण जैसे धातु पुनश्चक्रण (रीसाइक्लिंग) प्रक्रियाओं द्वारा प्राप्त किए जाते हैं। विकसित देशों में ई-अपशिष्ट के पुनश्चक्रण की सुविधाएँ तो उपलब्ध हैं; लेकिन विकासशील देशों में यह कार्य प्राय: हाथ से किया जाता है। इस प्रकार इस कार्य से जुड़े कर्मियों पर ई-अपशिष्ट में मौजूद विषैले पदार्थों का प्रभाव पड़ता है। ई-अपशिष्ट के उपचार का एक मात्र हल पुनश्चक्रण है, यदि इसे पर्यावरण-अनुकूल या हितैषी तरीके किया जाए।

16.4 कृषि-रसायन और उनके प्रभाव

हरित क्रांति के चलते फसल उत्पादन बढ़ाने के लिए अजैव (अकार्बनिक) उर्वरक (इनआर्गेनिक फर्टिलाइजर) और पीड़कनाशी का प्रयोग कई गुना बढ़ गया है और अब पीड़कनाशी, शाकनाशी, कवकनाशी (फंगीसाइड) आदि का प्रयोग काफी होने लगा है। ये सभी अलक्ष्य जीवों (नॉन-टारगेट आर्गेनिज्म), जो मृदा पारितंत्र के महत्त्वपूर्ण घटक हैं, के लिए विषैले हैं। क्या आप सोच सकते हैं कि स्थानीय पारितंत्र में उन्हें जैव आवर्धित (बायोमैग्निफाइड) किया जा सकता है? हम जानते हैं कि कृत्रिम उर्वरकों की मात्रा को

बढ़ाते जाने से जलीय पारितंत्र बनाम सुपोषण (यूट्रॉफिकेशन) पर क्या असर होगा। इसलिए कृषि वर्तमान समस्याएँ अत्यंत गंभीर हैं।

16.4.1 जैव खेती — केस अध्ययन

एकीकृत जैव खेती चक्रीय एवं शून्य अपशिष्ट (जीरो वेस्ट) वाली है। इसमें एक प्रक्रम से प्राप्त अपशिष्ट अन्य प्रक्रमों के लिए पोषक के रूप में काम में आता है। इसके कारण संसाधन का अधिकतम उपयोग संभव है और उत्पादन की क्षमता भी बढ़ती है। रमेश चंद्र डागर नामक सोनीपत, हरियाणा का किसान भी यही कर रहा है। वह मधुमक्षिका पालन, डेयरी प्रबंधन, जल संग्रहण (वाटर हार्वेस्टिंग), कंपोस्ट बनाने और कृषि का कार्य शृंखलाबद्ध प्रक्रमों में करता है जो एक दूसरे को संभालते हैं और इस प्रकार यह एक बहुत ही किफायती और दीर्घ-उपयोगी प्रक्रम बन जाता है। उस फसल के लिए रासायनिक उर्वरक के प्रयोग की कोई आवश्यकता नहीं रहती क्योंकि पशुधन के उत्सर्ग (मल-मूत्र) यानी गोबर का प्रयोग खाद के रूप में किया जाता है। फसल अपशिष्ट का प्रयोग कंपोस्ट बनाने के लिए किया जाता है जिसका प्रयोग प्राकृतिक उर्वरक के रूप में या फार्म की ऊर्जा की आवश्यकता की पूर्ति के लिए प्राकृतिक गैस के उत्पादन में किया जा सकता है। इस सूचना के प्रसार और एकीकृत जैव खेती के प्रयोग में सहायता प्रदान करने के लिए डागर ने हरियाणा किसान कल्याण क्लब बनाया है जिसकी वर्तमान सदस्य संख्या 5000 कृषक है।

16.5 रेडियो सक्रिय अपशिष्ट

आरंभ में न्यूक्लीय ऊर्जा को विद्युत उत्पादन के मामले में गैर-प्रदूषक तरीका माना जाता था। बाद में यह पता चला कि न्यूक्लीय ऊर्जा के प्रयोग में दो सर्वाधिक खतरनाक अंतर्निहित समस्याएँ हैं। पहली समस्या आकस्मिक रिसाव की है जैसा कि थ्री माइल आयलैंड और चेरनोबिल की घटनाओं में हुआ था। इसकी दूसरी समस्या रेडियोसक्रिय अपशिष्ट के सुरक्षित निपटान की है।

न्यूक्लीय अपशिष्ट से निकलने वाला विकिरण जीवों के लिए बेहद नुकसानदेह होता है क्योंकि इसके कारण अति उच्चदर से उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) होते हैं। न्यूक्लीय अपशिष्ट विकिरण की ज्यादा मात्रा (डोज) घातक यानी जानलेवा (लीथल) होती है लेकिन कम मात्रा के कारण कई विकार होते हैं। इसका सबसे अधिक बार-बार होने वाला विकार कैंसर है। इसलिए न्यूक्लीय अपशिष्ट अत्यंत प्रभावकारी प्रदूषक है और इसके उपचार में अत्यधिक सावधानी की जरूरत है।

यह सिफारिश की गई है कि परवर्ती भंडारण का कार्य उचित रूप में कवचित पात्रों में चट्टानों के नीचे लगभग 500 मीटर की गहराई में पृथ्वी में गाड़कर करना चाहिए। यद्यपि, निपटान की इस विधि के बारे में भी लोगों का कड़ा विरोध है।

आप क्यों सोचते हैं कि निपटान के इस तरीके से काफी लोग सहमत नहीं हैं? इस बारे में आप ऐसा क्यों सोचते हैं?

16.6 ग्रीनहाउस प्रभाव और विश्वव्यापी उष्णता

'ग्रीनहाउस प्रभाव' शब्द की उत्पति एक ऐसी परिघटना से हुई है जो पौधघर (ग्रीन हाउस) में होती है। क्या आपने कभी पौधघर देखा है? यह एक छोटा ग्लास का घर जैसा होता है जिसका उपयोग खासकर शीत ऋतु में पौधों को उगाने के लए किया जाता है। ग्लास पैनल प्रकाश को अंदर तो आने देता है लेकिन ताप को बाहर नहीं निकलने देता। इसलिए पौधघर ठीक उसी तरह गर्म हो जाता है जैसा कि कुछ घंटों के लिए धूप में पार्क कर दी गई कार का भीतरी भाग गर्म हो जाता है।

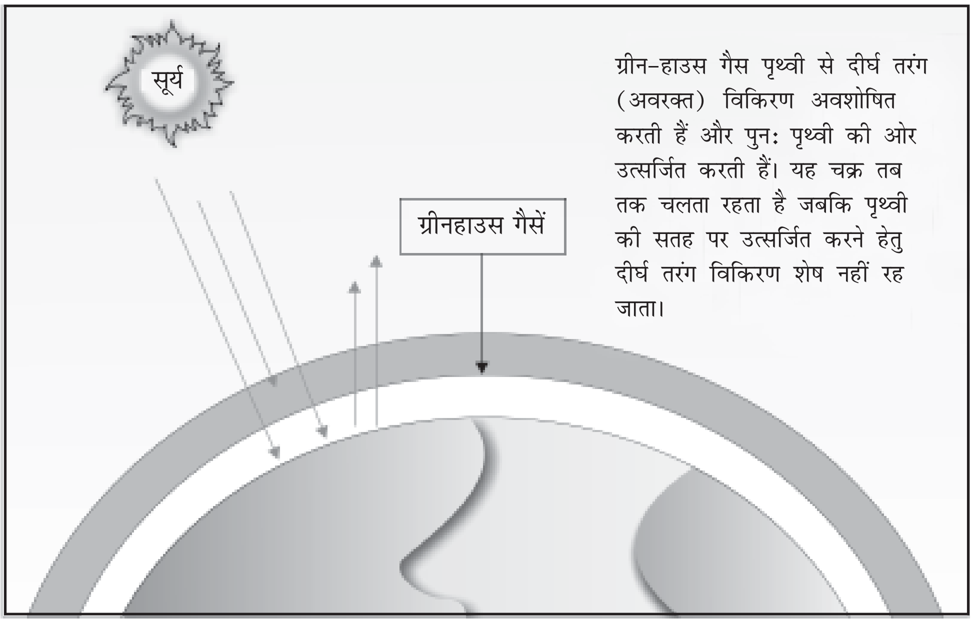

चित्र 16.6 सबसे बाहरी वायुमंडल पर सूर्य प्रकाश-ऊर्जा

ग्रीनहाउस प्रभाव प्राकृतिक रूप से होने वाली परिघटना है जिसके कारण पृथ्वी की सतह और वायुमंडल गर्म हो जाता है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि यदि ग्रीनहाउस प्रभाव नहीं होता तो आज पृथ्वी की सतह का औसत तापमान 15 डिग्री सेंटीग्रेड रहने के बजाय ठंडा होकर-18 (शून्य से नीचे) डिग्री सेंटीग्रेड रहता। ग्रीनहाउस प्रभाव को समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि सबसे बाहरी वायुमंडल में पहुँचने वाली सूर्य की ऊर्जा का क्या होता है (चित्र 16.6)। पृथ्वी की ओर आने वाले सौर विकिरण का लगभग एक चौथाई भाग बादलों और गैसों से परावर्तित (रिफ्लेक्ट) हो जाता है और दूसरा चौथाई भाग वायुमंडलीय गैसों द्वारा अवशोषित हो जाता है। लगभग आधा आगत (इनकमिंग) सौर विकिरण पृथ्वी की सतह पर पड़ता है और उसे गर्म करता है इसका (इंफ्रारेड रेडिएशन) कुछ भाग परावर्तित होकर लौट जाता है। पृथ्वी की सतह अंतरिक्ष में अवरक्त विकिरण के रूप में ऊष्मा (हीट) उत्सर्जित करती है। लेकिन इसका केवल बहुत छोटा भाग (टाइनी फ्रैक्शन) ही अंतरिक्ष में जाता है क्योंकि इसका अधिकांश भाग

वायुमंडलीय गैसों (यानी कार्बन डाइऑक्साइड, मेथेन, जलवाष्प, नाइट्रस ऑक्साइड और क्लोरोफलुरो कार्बनों) के द्वारा अवशोषित हो जाता है। इन गैसों के अणु (मॉलिक्यूल्स) ऊष्मा ऊर्जा (हीट इनर्जी) विकिरित करते हैं और इसका अधिकतर भाग पृथ्वी की सतह पर पुनः आ जाता है और इसे फिर से गर्म करता है। यह चक्र अनेकों बार होता रहता है। इस प्रकार पृथ्वी की सतह और निम्नतर वायुमंडल गर्म होता रहता है। ऊपर वर्णित गैसों को आमतौर पर ग्रीनहाउस गैस कहा जाता है (चित्र 16.7); क्योंकि इनके कारण ही ग्रीनहाउस प्रभाव पड़ते हैं।

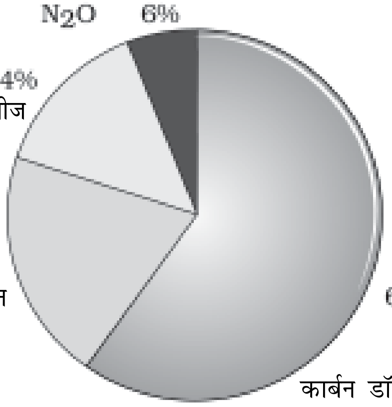

चित्र 16.7 पूर्ण विश्वव्यापी उष्णता के लिए विविध ग्रीन हाउस गैसों का सापेक्षिक योगदान

ग्रीनहाउस गैसों के स्तर में वृद्धि के कारण पृथ्वी की सतह का ताप काफी बढ़ जाता है जिसके कारण विश्वव्यापी उष्णता होती है। गत शताब्दी में पृथ्वी के तापमान में 0.6 डिग्री सेंटीग्रेड वृद्धि हुई है। इसमें से अधिकतर वृद्धि पिछले तीन दशकों में ही हुई है। एक सुझाव के अनुसार सन् 2100 तक विश्व का तापमान 1.4–5.8 डिग्री सेंटीग्रेड बढ़ सकता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि तापमान में इस वृद्धि से पर्यावरण में हानिकारक परिवर्तन होते हैं; जिसके परिणामस्वरूप विचित्र जलवायु-परिवर्तन (जैसे कि E1 तीनों प्रभाव) होते हैं। इसके फलस्वरूप ध्रुवीय टिम टोपियों और अन्य जगहों, जैसे हिमालय की हिम चोटियों का पिघलना बढ़ जाता है। कई वर्षों बाद इससे समुद्र-तल का स्तर बढ़ेगा जो कई समुद्रतटीय क्षेत्रों को जलमग्न कर देगा। वैश्विक उष्णता से होने वाले परिवर्तनों का कुल परिदृश्य अभी भी सक्रिय अनुसंधान का विषय है।

हम लोग विश्वव्यापी उष्णता को किस प्रकार नियंत्रित कर सकते हैं? इसका उपाय है; जीवाश्म ईंधन के प्रयोग को कम करना, ऊर्जा दक्षता में सुधार करना, वनोन्मूलन को कम करना तथा वृक्षारोपण और मनुष्य की बढ़ती हुई जनसंख्या को कम करना। वायुमंडल में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रयास भी किए जा रहे हैं।

16.7 समतापमंडल में ओजोन अवक्षय

आपने इसके पहले रसायन विज्ञान की 11 वीं की पाठ्यपुस्तक में 'खराब' ओजान के बारे में पढ़ा है जो निम्नतर वायुमंडल (क्षोभमंडल/ट्रॉपोस्फीयर) में बनता है और जिससे पौधों और प्राणियों को नुकसान पहुँचा है। वायुमंडल में 'अच्छा' ओजोन भी होता है जो इसके ऊपरी भाग यानी **समतापमंडल** (स्ट्रैटोस्फीयर) में पाया जाता है। यह सूर्य से निकलने वाले पराबैंगनी विकिरण (अल्ट्रावायलेट रेडिएशन) को अवशोषित करने वाले कवच का काम करता है। सजीवों के डीएनए और प्रोटीन खास कर पराबैंगनी (यू वी) किरणों को अवशोषित करते हैं और इसकी उच्च ऊर्जा इन अणुओं के रासायनिक आबंध (केमिकल बाण्डस) को भंग करते हैं। इस प्रकार पराबैंगनी किरणें सजीवों के लिए बेहद

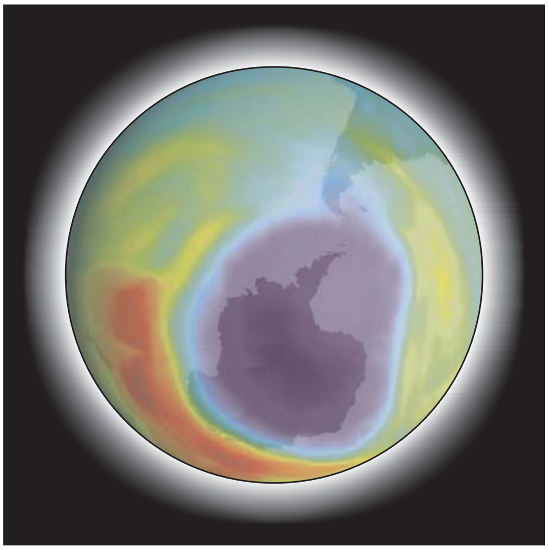

चित्र 16.8 ओजोन छिद्र एन्टार्कटिका के ऊपर वह क्षेत्र है जो बैंगनी रंग से दर्शाया गया है जबकि ओजोन स्तर सबसे पतला है। ओजोन की मोटाई डॉबसन यूनिट (ध्यानपूर्वक स्केल को देखें जो हल्के बैंगनी यानी वायलेट से लाल रंग) में दर्शाया गया है। एन्टार्कटिका के ऊपर ओजोन छिद्र प्रतिवर्ष अगस्त के उत्तरार्ध और अक्टूबर के प्रारंभ में बनता है। साभार: नासा (एन ए एस ए)

हानिकारक हैं। वायुमंडल के निचले भाग से लेकर शिखर तक वे वायु स्तंभ (कॉलम) में ओजोन की मोटाई **डॉबसन यूनिट** (डीयू) में मापी जाती है।

आण्विक ऑक्सीजन पर पराबैंगनी किरणों की क्रिया के फलस्वरूप ओजोन गैस सतत् बनती रहती है और समतापमंडल में इसका आण्विक ऑक्सीजन में निम्नीकरण (डिग्रडेशन) भी होता रहता है। समतापमंडल में ओजोन के उत्पादन और अवक्षय निम्नीकरण में संतुलन होना चाहिए। हाल में, क्लोरोफ्लुरोकार्बन (सी एफ सीज/CFCs) के द्वारा ओजोन निम्नीकरण बढ़ जाने से इसका संतुलन बिगड़ गया है। वायुमंडल के निचले भाग में उत्सर्जित CFCs ऊपर की ओर उठता है और यह समतापमंडल में पहुँचता है। समतापमंडल में पराबैंगनी किरणें उस पर कार्य करती हैं जिसके कारण C1 परमाणु का मोचन (रिलीज) होता है। C1 के कारण ओजोन का निम्नीकरण होता है जिनके कारण आण्विक ऑक्सीजन का मोचन होता है। इस अभिक्रिया में C1 परमाणु का उपभोग नहीं होता है; क्योंकि यह सिर्फ उत्प्रेरक का कार्य करता है। इसलिए समतापमंडल में जो भी क्लोरोफ्लुरोकार्बन जुड़ते जाते हैं उनका ओजोन स्तर पर स्थायी और सतत् प्रभाव पड़ता है। यद्यपि समतापमंडल में ओजोन का अवक्षय विस्तृत रूप से होता रहता है लेकिन यह अवक्षय ऐंटार्कटिक क्षेत्र में खासकर विशेषरूप से अधिक होता है। इसके फलस्वरूप यहाँ काफी बड़े क्षेत्र में ओजोन की परत काफी पतली हो गई है जिसे सामान्यता: **ओजोन छिद्र** (ओजोन होल) कहा जाता है (चित्र 16.8)। पराबैंगनी -बी (यूवी-बी) की अपेक्षा छोटे तरंगदैर्ध्य (वेवलैंथ) युक्त पराबैंगनी (यूवी) विकिरण पृथ्वी के वायुमंडल द्वारा लगभग पूरा का पूरा अवशोषित हो जाता है बशर्ते कि ओजोन स्तर ज्यों का त्यों रहे। लेकिन यूवी-बी डी एन ए को क्षतिग्रस्त करता है और उत्परिवर्तन हो सकता है। इसके कारण त्वचा में बुढ़ापे के लक्षण दिखते हैं, इसकी कोशिकाएँ क्षतिग्रस्त हो जाती हैं और विविध प्रकार के त्वचा कैंसर हो सकते हैं। हमारे आँख का स्वच्छमंडल (कॉर्निया) यूवी-बी विकिरण का अवशोषण करता है। इसकी उच्च मात्रा के कारण कॉर्निया का शोथ हो जाता है। जिसे **हिम अंधता** (स्नो-ल्माइंडनेश) मोतियाबिंद आदि कहा जाता है। इसके उद्भासन से स्थायी रूप से क्षतिग्रस्त हो सकता है।

ओजोन अवक्षय के हानिकर प्रभाव को देखते हुए सन् 1987 में मॉन्ट्रियल (कनाडा) में एक अंतर्राष्ट्रीय संधि पर हस्ताक्षर हुए जिसे **मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल** कहा जाता है। यह संधि 1989 से प्रभावी हुई। ओजोन अवक्षयकारी पदार्थों के उत्सर्जन पर नियंत्रण के लिए बाद में और कई अधिक प्रयास किए गए तथा और प्रोटोकॉल में विकसित और विकासशील देशों के लिए अलग-अलग निश्चित दिशा निर्देश जोड़े गए जिससे कि सी.एफ.सी. और अन्य ओजोन अवक्षयकारी रसायनों के उत्सर्जनों को कम किया जाए।

16.8 संसाधन के अनुचित प्रयोग और अनुचित अनुरक्षण द्वारा निम्नीकरण

प्राकृतिक संसाधनों का निम्नीकरण न केवल प्रदूषकों की क्रिया के कारण होता है बल्कि संसाधनों के उपयोग करने के जो अनुचित तरीके हैं उनके कारण भी होता है।

मृदा अपरदन और मरुस्थलीकरण — सबसे ऊपरी मृदा के उर्वर होने में सैकड़ों वर्ष लग जाते हैं लेकिन मनुष्य के क्रियाकलापों जैसे अधिक खेती करने,अबाधित चराई, वनोन्मूलन और सिंचाई के घटिया तरीकों के कारण यह शीर्ष स्तर काफी आसानी से हटाया जा सकता है जिसके कारण शुष्क भूमि-खंड बन जाते हैं। कालांतर में जब ये भूमि-खंड आपस में जुड़ जाते हैं तो मरुस्थल (डेजर्ट) का निर्माण होता है। पूरे विश्व में यह माना जाता है कि मरुस्थलीकरण, खासकर बढ़ते हुए नगरीकरण (शहरीकरण) के कारण, आजकल एक मुख्य समस्या है।

जलाक्रांति और मृदा लवणता — जल के उचित निकास के बिना सिंचाई के कारण मृदा में जलाक्रांति (वाटर लॉगिंग) होती है। फसल को प्रभावित करने के साथ-साथ इससे मृदा की सतह पर लवण आ जाता है। तब यह लवण भूमि की सतह पर एक पर्पटी (क्रस्ट) के रूप मे जमा हो जाता है या पौधों की जड़ों पर एकत्रित होने लगता है। लवण की बढ़ी हुई मात्रा फसल की वृद्धि के लिए नुकसानदेह है और कृषि के लिए बेहद हानिकर है। जलाक्रांति और लवणता कुछ ऐसी समस्याएँ हैं जो हरित क्रांति के कारण आई हैं।

16.9 वनोन्मूलन

वन प्रदेश का वन-रहित क्षेत्रों में रूपांतरण करना वनोन्मूलन (डीफोरेस्ट्रेशन) कहा जाता है। एक आकलन के अनुसार शीतोष्ण क्षेत्र में केवल एक प्रतिशत वन नष्ट हुए हैं, जबकि उष्णकटिबंध में लगभग 40 प्रतिशत वन नष्ट हो गए हैं। भारत में खासकर निर्वनीकरण की वर्तमान स्थिति काफी दयनीय है। 20 वीं सदी के प्रारंभ में भारत के कुल क्षेत्रफल के लगभग 30 प्रतिशत भाग में जंगल थे। सदी के अंत तक यह घटकर 19.4 प्रतिशत रह गया। भारत की राष्ट्रीय वन नीति (1988) में सिफारिश की गई है कि मैदानी इलाकों में 33 प्रतिशत जंगल क्षेत्र होने चाहिए और पर्वतीय क्षेत्रों में 67 प्रतिशत जंगल क्षेत्र होने चाहिए।

वनोन्मूलन किस प्रकार होता है? इसके लिए कोई एक कारण नहीं है। बल्कि मनुष्य के कई कार्य वनोन्मूलन यानी वनों के उन्मूलन में सहायक होते हैं। वनोन्मूलन का एक मुख्य कारण है कि वन प्रदेश को कृषि भूमि में बदला जा रहा है जिससे कि मनुष्य की बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए भोजन उपलब्ध हो सके। वृक्ष, इमारती लकड़ी (टिंबर), काष्ठ-ईंधन, पशु-फार्म और अन्य कई उद्देश्यों के लिए काटे जाते हैं। काटो और जलाओ कृषि (**स्लैश एवं बर्न कृषि**) (एग्रिकल्चर) जिसे आमतौर पर भारत के उत्तर पूर्वी राज्यों में **झूम खेती (कल्टिवेशन)** कहा जाता है, के कारण भी वनोन्मूलन हो रहा है। काटो एवं जलाओ कृषि में कृषक जंगल के वृक्षों को काट देते हैं और पादप-अवशेष

को जला देते हैं। राख का प्रयोग उर्वरक के रूप में तथा उस भूमि का प्रयोग खेती के लिए या पशु चरागाह के रूप में किया जाता है। खेती के बाद उस भूमि को कई वर्षों तक वैसे ही खाली छोड़ दिया जाता है ताकि पुन:उर्वर हो जाए। कृषक फिर अन्य क्षेत्रों में जाकर इसी प्रक्रिया को दोहराता है।

वनोन्मूलन के परिणाम क्या-क्या हैं? इसके मुख्य प्रभावों में से एक है कि वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता बढ़ जाती है; क्योंकि वृक्ष जो अपने जैवभार (बायोमास) में काफी अधिक कार्बन धारण कर सकते थे; वनोन्मूलन के कारण नष्ट हो रहे हैं। वनोन्मूलन के कारण आवास नष्ट होने से जैव-विविधता (बायोडाइवर्सिटी) में कमी होती है। इसके कारण जलीय चक्र (हाइड्रोलॉजिकल साइकल) बिगड़ जाता है, मृदा का अपरदन होता है और चरम मामलों में इसका मरुस्थलीकरण (डेजर्टिफिकेशन) यानी मरुभूमि में परिवर्तित हो सकता है।

पुनर्वनीकरण (रीफॉरेस्टेशन) वह प्रक्रिया है जिसमें वन को फिर से लगाया जाता है जो पहले कभी मौजूद था और बाद में उसे नष्ट कर दिया गया। निर्वनीकृत क्षेत्र में पुनर्वनीकरण प्राकृतिक रूप से भी हो सकता है। फिर भी, वृक्ष रोपण कर इस कार्य में तेजी ला सकते हैं। ऐसा करते समय उस क्षेत्र में पहले से मौजूद जैव विविधता का भी उचित ध्यान रखा जाता है।

16.9.1 वन-संरक्षण में लोगों की भागीदारी - एक अध्ययन

भारत में इसका लंबा इतिहास है। सन् 1731में राजस्थान में जोधपुर नरेश ने एक नए महल के निर्माण के लिए अपने एक मंत्री से लकड़ी का इंतजाम करने के लिए कहा। राजा के मंत्री और कर्मी एक गाँव, जहाँ बिश्नोई परिवार के लोग रहा करते थे, के पास के जंगल में वृक्ष काटने के लिए गए। बिश्नोई परिवार की अमृता नामक एक महिला ने अद्भुत साहस का परिचय दिया। वह महिला पेड़ से चिपक कर खड़ी हो गई और उसने राजा के लोगों से कहा कि वृक्ष को काटने से पहले मुझे काटने का साहस करो। उसके लिए वृक्ष की रक्षा अपने जीवन से कहीं अधिक बढ़कर है। दु:ख की बात है कि राजा के लोगों ने उसकी बातों पर ध्यान नहीं दिया और पेड़ के साथ-साथ अमृता देवी को भी काट दिया। उसके बाद उसकी तीन बेटियों तथा बिश्नोई परिवार के सैकड़ों लोगों ने वृक्ष की रक्षा में अपने प्राण गवाँ दिए। इतिहास में कहीं भी इस प्रकार की प्रतिबद्धता की कोई मिसाल नहीं है जबकि पर्यावरण की रक्षा के लिए मुनष्य ने अपना बलिदान कर दिया हो। हाल ही में, भारत सरकार ने **अमृता देवी बिश्नोई वन्यजीव संरक्षण पुरस्कार देना शुरू किया है।** यह पुरस्कार ग्रामीण क्षेत्रों के ऐसे व्यक्तियों या सामुदायों को दिया जाता है जिन्होंने वन्यजीवों की रक्षा के लिए अद्भुत साहस और समर्पण दिखाया हो। आपने हिमालय के गढ़वाल के **चिपको आंदोलन** के बारे में सुना होगा। सन् 1974 में ठेकेदारों द्वारा काटे जा रहे वृक्षों की रक्षा के लिए इससे चिपक कर स्थानीय महिलाओं ने काफी बहादुरी का परिचय दिया। विश्वभर में लोगों ने चिपको आंदोलन की सराहना की है।

स्थानीय समुदायों की भागीदारी के महत्त्व को महसूस करते हुए भारत सरकार ने 1980 के दशक में **संयुक्त वन प्रबंधन** (ज्वाइंट फॉरेस्ट मैनेजमेंट/जे एफ एम) लागू

किया जिससे कि स्थानीय समुदायों के साथ मिलकर काफी अच्छी तरह से वनों की रक्षा और प्रबंधन का कार्य किया जा सके। वनों के प्रति उनकी सेवाओं के बदले ये समुदाय विविध प्रकार के वनोत्पाद (फारेस्ट प्रोडक्ट्स) जैसे फल, गोंद, रबड़, दवाई आदि प्राप्तकर लाभ उठाते हैं। इस प्रकार वन का संरक्षण निर्वहनीय तरीके (सस्टेनेबल) से किया जा सकता है।

सारांश

पर्यावरण प्रदूषण और महत्त्वपूर्ण संसाधनों से संबद्ध मुख्य समस्याएँ, स्थानीय, क्षेत्रीय स्तर से लेकर विश्व स्तर पर अलग-अलग हैं। वायु प्रदूषण मुख्य रूप से उद्योगों तथा स्वचालित वाहनों में जीवाश्म ईंधनों, जैसे कोयला तथा पेट्रोलियम के जलने से होता है। ये मनुष्य, जानवरों तथा पौधों के लिए हानिकर हैं इसलिए हमारे आस पास के वायु को स्वच्छ रखने के लिए इनको हटाना जरूरी है। घरेलू वाहित मल, जो जलाशयों के प्रदूषण का सर्वाधिक सामान्य स्रोत है, के कारण घुली हुई ऑक्सीजन कम हो जाती है लेकिन अभिग्राही जल के जैव रासायनिक ऑक्सीजन की आवश्यकता बढ़ जाती है। घरेलू वाहित मल में पोषक तत्त्व, खासकर नाइट्रोजन और फॉस्फोरस अधिक होते हैं। इसके कारण सुपोषण और बुरी तरह से शैवाल स्फुटन होते हैं। औद्योगिक अपशिष्ट जल में प्रायः विषैले रासायनिक, खासकर भारी धातु और जैव यौगिक काफी अधिक होते हैं। औद्योगिक अपशिष्ट जल जीवधारियों के लिए नुकसानदेह हैं। नगरपालिका के ठोस अपशिष्ट भी समस्याएँ उत्पन्न करते हैं और इनका निपटान लैंडफिलों में अवश्य करना चाहिए। खतरनाक अपशिष्ट जैसे पुराने बेकार जहाज, रेडियोसक्रिय अपशिष्ट और ई-अपशिष्ट के निपटान के लिए अतिरिक्त प्रयासों की जरूरत होती है। मृदा प्रदूषण मुख्य रूप से कृषि रसायनों (जैसे पीड़कनाशी) और इसके ऊपर डाले गए ठोस अपशिष्टों के निक्षालितकों (लीचेट्स) के कारण होता है।

वैश्विक प्रकृति की दो मुख्य पर्यावरणीय समस्याएँ हैं; ग्रीनहाउस के बढ़ते हुए प्रभाव, जिसके कारण पृथ्वी पर गर्मी बढ़ रही है, और समतापमंडल (स्ट्रैटोस्फीयर) में ओजोन का अवक्षय हो रहा है। ग्रीनहाउस प्रभाव की वृद्धि मुख्य रूप से कार्बन डाइऑक्साइड और CFCs के उत्सर्जन में वृद्धि के कारण और वनोन्मूलन के कारण भी होती है। इसके कारण जल वृष्टि के स्वरूप तथा वैश्विक तापमान में भारी परिवर्तन हो सकता है। साथ ही, यह जीवधारियों को काफी नुकसान भी पहुँचा सकता है। समतापमंडल में ओजोन, का अवक्षय CFCs के उत्सर्जन के कारण होता है। जो पराबैंगनी विकिरण के हानिकर प्रभाव से हमारी रक्षा करता है, इसके कारण त्वचा कैंसर, उत्परिवर्तन और अन्य विकारों के बढ़ने की संभावना अधिक होती जा रही है।

अभ्यास

1. घरेलू वाहित मल के विभिन्न घटक क्या हैं? वाहित मल के नदी में विसर्जन से होने वाले प्रभावों की चर्चा करें।

2. आप अपने घर, विद्यालय या अपने अन्य स्थानों के भ्रमण के दौरान जो अपशिष्ट उत्पन्न करते हैं, उनकी सूची बनाएँ। क्या आप उन्हें आसानी से कम कर सकते हैं? कौन से ऐसे अपशिष्ट हैं जिनको कम करना कठिन या असंभव होगा?

3. वैश्विक उष्णता में वृद्धि के कारणों और प्रभावों की चर्चा करें। वैश्विक उष्णता वृद्धि को नियंत्रित करने वाले उपाय क्या हैं?

4. कॉलम अ और ब में दिए गए मदों का मिलान करें

	कॉलम 'अ'		कॉलम 'ब'
(क)	उत्प्रेरक परिवर्तक	1.	कणकीय पदार्थ
(ख)	स्थिर वैद्युत अवक्षेपित्र (इलेक्ट्रोस्टैटिक प्रेसिपिटेटर)	2.	कार्बन मोनो ऑक्साइड और नाइट्रोजन ऑक्साइड
(ग)	कर्णमफ (इयर मफ्स)	3.	उच्च शोर स्तर
(घ)	लैंडफिल	4.	ठोस अपशिष्ट

5. निम्नलिखित पर आलोचनात्मक टिप्पणी लिखें
   (क) सुपोषण (यूट्रोफिकेशन)
   (ख) जैव आवर्धन (बायोलॉजिकल मैग्निफिकेशन)
   (ग) भौमजल (भूजल) का अवक्षय और इसकी पुनपूर्ति के तरीके

6. ऐंटार्कटिका के ऊपर ओजोन छिद्र क्यों बनते हैं? पराबैंगनी विकिरण के बढ़ने से हमारे ऊपर किस प्रकार प्रभाव पड़ेंगे?

7. वनों के संरक्षण और सुरक्षा में महिलाओं और समुदायों की भूमिका की चर्चा करें।

8. पर्यावरणीय प्रदूषण को रोकने के लिए एक व्यक्ति के रूप में आप क्या उपाय करेंगे?

9. निम्नलिखित के बारे में संक्षेप में चर्चा करें —
   (क) रेडियो सक्रिय अपशिष्ट
   (ख) पुराने बेकार जहाज और ई-अपशिष्ट
   (ग) नगरपालिका के ठोस अपशिष्ट

10. दिल्ली में वाहनों से होने वाले वायु प्रदूषण को कम करने के लिए क्या प्रयास किए गए? क्या दिल्ली में वायु की गुणवत्ता में सुधार हुआ?

11. निम्नलिखित के बारे में संक्षेप में चर्चा करें
    (क) ग्रीनहाउस गैसें
    (ख) उत्प्रेरक परिवर्तक (कैटालिटिक कनवर्टर)
    (ग) पराबैंगनी-बी (अल्ट्रावायलेट बी)